॥ ॐ ॥

पिताहमस्य जगतः मैं इस जगत का पिता हूँ।

श्रीमद् भागवत गीता में भगवान वासुदेव श्रीकृष्ण ने स्वयं को जगत्-पिता कहा है। वीर अर्जुन भी भगवान से कहते हैं — पितासि लोकस्य चराचरस्य - आप चरा-चर के पिता हैं।

जगत पिता भी अपने सन्तानों के प्रति सम हैं। वे कहते हैं — समोऽहं सर्वभूतेषु।

भगवान सभी प्राणियों के सुहृद और हितैषी हैं। किसी के प्रति उन्हें राग-द्वेष नहीं है। 'सुहृदं सर्वभूतानां'।

परम पिता चाहता है कि उनके पुत्र भी उन्हीं के समान शुद्ध-बुद्ध और मुक्त हों। उसी के गुण और स्वभाव वाले हों।

ईश्वर के अंश

जीवात्मा ईश्वर का अंश (भोगवंशी) है, जो ईश्वर की ही भाँति सनातन (सत्त), चेतन (ज्ञानपूर्ण) अविनाशी अविकारी और आनन्द पूर्ण है। परन्तु जड़ प्रकृति से तादात्म्य होने पर वह अपनी दिव्यता भूल जाता है। अपने को इदंशरीरं मैं शरीर हूँ कहता है और अपने को कर्त्ता मानता है। इस प्रकार वह अज्ञान वश अहंकारी, आसक्त, लोभी, कामी, क्रोधी होकर न केवल देवत्व से मनुष्यत्व, मनुष्यत्व से पशुत्व, पशुत्व से भी नीचे गिरकर असुरत्व को प्राप्त होता है। फिर कर्मबन्धन में फँसकर जीव जन्म-जन्मान्तर दुःख प्राप्त करता है।

इदं शरीरं

परमात्मा बहुत दयालु है, प्रेमी है, वह अपनी सन्तानों को दुःख से उबारने के लिये अनेक साधनों और विधियों का निर्देश करते हैं, उपदेश देते हैं। जिनमें से अनेक साधन ज्ञानयोग, ध्यानयोग, कर्मयोग, अष्टांगयोगादि हैं। ये सभी योग ब्रह्म प्राप्ति के साधन हैं।

लेकिन संसारी जीव के मन में संशय बना रहता है कि सांसारिक कार्यों में अति व्यस्त रहते हुये, इन साधनों का

संशय

को कैसे कर पाना सम्भव है। तब भगवान अर्जुन को समाधान
योगी हो देते हैं कि तस्माद् योगी भवार्जुन — हे अर्जुन तू योगी हो जा
योगी कौन हो सकता है — योगी परमात्मा का निरन्तर चिन्तन करता हुआ अपने कर्मफल के प्रति अनासक्त होकर अपने कर्त्तव्यों का पालन करता है। व भक्त चाहे गृहस्थ हो या ब्रह्मचारी, स्त्री हो या पुरुष - वही योगी है। वह अपने घर पर रहते हुये, सब कर्त्तव्यों को करते हुये भी योगी है।

फिर भी अर्जुन को संदेह है कि कैसे सम्भव हो सकता है। वह कैसे ~~हर समय~~ कर्त्तव्यों को करता हुआ कैसे याद कर सकता है। तब भगवान कहते हैं कि तू हर समय मेरा स्मरण कर और युद्ध (कर्त्तव्य) कर। तस्मात् सर्वकालेषु मामनुस्मर युद्ध च हर समय मेरा स्मरण कर, ~~और युद्ध कर~~ मनन करते हुये नित्य-निरन्तर परमात्मा से युक्त (जुड़ना) होकर युद्ध कर। कर्तव्य करने वाले भक्तों को भगवान वह बुद्धि देते हैं जिससे वह ~~भगवान~~ ब्रह्मतत्व को प्राप्त हो जाते हैं।

सम्प्रर्पण पत्रं पुष्पं

भगवान अर्जुन को ईश्वर को न भूलने को या सदा स्मरण रखने का साधन भी बताते हैं। जो भक्त प्रेम से मुझको पत्रं-पुष्पं-फलं-तोयं (जल) जो भी वस्तु प्रेम से अर्पण करता है, उसे मैं प्रेम से स्वीकार करता हूं। आगे भी कहते हैं —

हे अर्जुन! तू जो भी कर्म करता है, जो भी खाता है, जो भी हवन करता है, जो दान देता है, जो तप करता है, उन सबको मेरे को अर्पण कर दो। यह ईश्वर को निरन्तर याद ~~करने~~ रखने का रहस्य है। इस प्रकार सभी कर्मों के फल को भगवान को अर्पित करने से हमारे सभी कार्य सफल और सरल हो जाते हैं। क्योंकि फिर भक्त की रक्षा का भार पिता पर आता है। वह पिता है, उतना ही प्यार करता है, अनुग्रह करता है जितना एक माँ अपने बच्चे का करती है।

3.

~~मेरे भक्त कभी पत~~

मेरे भक्त का कभी पतन नहीं होता है क्योंकि कर्मफल का त्याग करने वाला कभी कर्म बन्धन में नहीं बँधता।

लेकिन अर्जुन रूपी भक्त का संशयी मन पुनः प्रश्न करता है - जो भक्त निरन्तर अभ्यास न कर पाये या मन एकाग्र न कर पाये तो उसका क्या होगा?

भगवान भक्त को पुनः आश्वासन देते हैं कि हुये और भी सरल साधन बताते हैं कि यदि तू बुद्धि से युक्त न हो सके तो तू जो भी कर्म करता है उसके फल को अनासक्त हो कर त्याग करो। फल त्याग रूपी यज्ञ करने से तुझे क्रमशः परम सत्य की अनुभूति होने लगेगी।

ईश्वर को सब कुछ समर्पण करने और उनके निमित्त कर्म करने से भक्त की रक्षा का ~~भार~~ उत्तरदायित्व भगवान पर होता है। मनुष्य के दुःखों को दूर करने का एकमात्र उपाय केवल भगवान की भक्ति ही है - इसे पुनः याद दिलाते हैं कि -

'मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥ ७.३४

तू मेरा ध्यान कर, मेरी भक्ति कर, मेरा भजन कर, अपने को मुझमें ही अर्पित कर नमस्कार कर। इस अभ्यास से तू मुझे ही प्राप्त होगा। जब साधक अपनी बुद्धि और चेतना को भगवान की इच्छा को ही अपनी इच्छा मानने लगता है तो उसे ज्ञान की प्राप्ति होती है। उसकी शरण में जाने पर परम स्नेही जगत पिता उसे परम शांति, सन्तोष और आनन्द ~~प्रदान~~ प्रदान करते हैं।

जय श्री कृष्ण